नईदुनिया

संपादकीय

संघ प्रमुख के बयान से जगी आस

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के शताब्दी वर्ष में तिरुवनंतपुरम में आयोजित कार्यक्रम में सरसंघचालक डॉ. मोहन भागवत के वक्तव्य ने दक्षिण एशिया की राजनीति में नई चर्चा छेड़ दी है। उन्होंने कहा, 'हम हिटलर नहीं हैं, पाकिस्तान से बातचीत के रास्ते खुलेंगे।' इस एक वाक्य ने भारत-पाक वार्ता की संभावनाओं को लेकर नई उम्मीद जगा दी है। संघ का यह बयान सरकार के लिए माहौल तैयार करने जैसा माना जा रहा है। सरकार यदि सीधे पहल करे तो राजनीतिक जोखिम हो सकता है, जबकि संघ के माध्यम से जनमानस को संवाद के लिए तैयार किया जा सकता है।

हालांकि इस राह में चुनौतियां कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा पाकिस्तान की सेना है, जहां वास्तविक शक्ति रावलपिंडी के हाथों में मानी जाती है और भारत-विरोध उसकी रणनीति का अहम हिस्सा रहा है। दूसरी चुनौती आतंकवाद है। मुंबई से लेकर पुलवामा तक के घाव अभी भी ताजा हैं और आतंक पर ठोस कार्रवाई के बिना किसी भी वार्ता को जनसमर्थन मिलना कठिन होगा। तीसरी चुनौती घरेलू राजनीति है, जहां विपक्ष इसे नीति परिवर्तन बताकर सवाल उठा सकता है।

डॉ. भागवत ने यह भी कहा कि आज भी पाकिस्तान में एक बड़ा वर्ग विभाजन को गलत मानता है और टू-नेशन थ्योरी से सहमत नहीं है। उनके अनुसार भविष्य में दोनों देशों को साथ लाना हो या शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व का वातावरण बनाना हो, संवाद के रास्ते खुले रहने चाहिए। यह संदेश बताता है कि बंदूक के बजाय बातचीत को प्राथमिकता दी जानी चाहिए और पाकिस्तान में भारत-विरोध के अलावा भी सकारात्मक सोच रखने वाला वर्ग मौजूद है।

पिछले एक दशक से भारत-पाक संबंध लगभग ठप हैं। वर्ष 2019 के बाद औपचारिक वार्ता, व्यापार, क्रिकेट और सांस्कृतिक आदान-प्रदान लगभग बंद हैं। ऐसे में संघ प्रमुख का बयान ट्रैक-टू कूटनीति की दिशा में संकेत माना जा सकता है। पाकिस्तान की आर्थिक बदहाली, चीन के कर्ज के दबाव और भारत की बढ़ती वैश्विक प्रतिष्ठा ने वहां के एक वर्ग को रिश्ते सामान्य करने की जरूरत का एहसास कराया है।

हाल के समय में शंघाई सहयोग संगठन के मंच पर अनौपचारिक बातचीत, करतारपुर कॉरिडोर का संचालन और सीमित व्यापार की चर्चाएं भी संकेत देती हैं कि संवाद की संभावना पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है। दवा, कृषि उत्पाद, धार्मिक पर्यटन, मेडिकल वीजा और आपदा प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में सहयोग विश्वास बहाली का माध्यम बन सकते हैं। लेकिन भारत की शर्त स्पष्ट रहनी चाहिए कि आतंकवाद और बातचीत साथ-साथ नहीं चल सकते।

विभाजन की पीड़ा तीन पीढ़ियां झेल चुकी हैं। नफरत किसी समस्या का स्थायी समाधान नहीं बन सकती। संघ प्रमुख के बयान ने वार्ता की संभावना जरूर जगाई है, लेकिन इसे वास्तविकता में बदलने की जिम्मेदारी दोनों देशों की है। भारत ने संवाद की खिड़की खुली रखी है, अब पाकिस्तान को तय करना है कि वह अतीत की राजनीति में उलझा रहेगा या भविष्य की ओर कदम बढ़ाएगा।

आजकल

युद्ध की आंच में झुलसती जिंदगी

अमेरिका-ईरान संघर्ष की आग अब केवल पेट्रोल-डीजल तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसका असर भारत के अस्पतालों तक पहुंच गया है। कैंसर जैसी गंभीर बीमारी का इलाज और कठिन होता जा रहा है तथा जीवनरक्षक दवाओं की उपलब्धता प्रभावित होने लगी है। नवोदय कैंसर मेडिकल ऑन्कोलॉजी विभाग के चेयरपर्सन डॉ. श्याम अग्रवाल के अनुसार कैंसर उपचार में उपयोग होने वाली दो महत्वपूर्ण दवाओं सिस्प्लैटिन और कार्बोप्लैटिन की पिछले दो-तीन सप्ताह से भारी कमी बनी हुई है। फेफड़ों, मुंह, गर्भाशय और ब्लड कैंसर समेत कई प्रकार के कैंसर के इलाज में इनका उपयोग होता है और इनकी कमी से बड़ी संख्या में मरीज प्रभावित हो सकते हैं।

इस संकट का प्रमुख कारण वैश्विक सप्लाई चेन का प्रभावित होना है। होर्मुज जलडमरूमध्य में तनाव के कारण दवा निर्माण के लिए आवश्यक कच्चे माल की आपूर्ति बाधित हुई है। भारत अपनी बड़ी मात्रा में एक्टिव फार्मास्युटिकल इंग्रीडिएंट्स का आयात करता है, जिससे कंटेनरों की देरी और परिवहन लागत में भारी वृद्धि हुई है। वहीं कच्चे तेल की बढ़ती कीमतों ने दवा निर्माण में प्रयुक्त सॉल्वेंट, प्लास्टिक और पैकेजिंग सामग्री को भी महंगा कर दिया है।

सिस्प्लैटिन और कार्बोप्लैटिन जैसी जेनेरिक दवाएं आर्थिक रूप से कमजोर मरीजों के लिए सहारा थीं। अब उनकी कमी के कारण महंगे विकल्प अपनाने पड़ रहे हैं और कई मामलों में इलाज टालना पड़ रहा है। समय पर कीमोथेरेपी न मिलने से बीमारी गंभीर अवस्था में पहुंच सकती है। इसलिए आवश्यक है कि सरकार वैकल्पिक सप्लाई रूट विकसित करे, घरेलू एपीआई उत्पादन को गति दे और जीवनरक्षक दवाओं की निर्बाध उपलब्धता सुनिश्चित करे। क्योंकि पेट्रोल महंगा होने से गाड़ी रुकती है, लेकिन दवा महंगी होने से जिंदगी रुक जाती है।

लोकतंत्र का अजब खेलः नोटा से हारी पार्टी को मिले 20 सांसद

भारतीय लोकतंत्र की खूबसूरती यही है कि यहां कब क्या हो जाए, कोई नहीं जानता। एक ऐसी पार्टी, जो कल तक गुमनाम थी और जिसके उम्मीदवारों को नोटा से भी कम वोट मिले थे, आज संसद में 20 सांसदों के साथ राष्ट्रीय चर्चा का केंद्र बन गई है। बात हो रही है नेशनलिस्ट सिटीजन्स पार्टी ऑफ इंडिया (एनसीपीआई) की।

एनसीपीआई की कहानी बताती है कि भारतीय लोकतंत्र में कुछ भी असंभव नहीं है। यहां नोटा से हारने वाली पार्टी भी संसद में किंगमेकर बन सकती है और पति-पत्नी द्वारा संचालित एक छोटी पार्टी रातोंरात राष्ट्रीय राजनीति के केंद्र में आ सकती है। यह घटनाक्रम दल-बदल कानून की समीक्षा की मांग करता है और यह सोचने पर भी मजबूर करता है कि क्या चुनाव आयोग को पंजीकृत लेकिन निष्क्रिय दलों के लिए नए नियम बनाने चाहिए। फिलहाल एनसीपीआई और उसके 20 सांसद भारतीय राजनीति के सबसे चौंकाने वाले अध्यायों में शामिल हो चुके हैं।

रिकॉर्ड के अनुसार एनसीपीआई का गठन वर्ष 2023 में पश्चिम बंगाल में हुआ था। इस पार्टी की स्थापना उत्तिया कुंडू और उनकी पत्नी शेउली कुंडू ने की। पार्टी के अध्यक्ष उत्तिया कुंडू हैं, जबकि शेउली कुंडू कोषाध्यक्ष हैं। हावड़ा स्थित कार्यालय से संचालित यह पार्टी चुनाव आयोग में पंजीकृत तो है, लेकिन मान्यता प्राप्त नहीं है। उत्तिया स्वयं को बंगाली समाचारपत्र का संपादक और शिक्षक बताते हैं, जबकि शेउली कलकत्ता हाईकोर्ट की अधिवक्ता हैं।

पार्टी का नारा था- 'अपने अधिकारों को बचाने के लिए दलबदलुओं को नकारें।' विडंबना यह है कि आज यही पार्टी दलबदल की राजनीति का सबसे बड़ा उदाहरण बन गई है। जिस विचारधारा के आधार पर पार्टी बनी थी, आज उसी के विपरीत उसकी पहचान बनती दिखाई दे रही है।

वर्ष 2023 के त्रिपुरा विधानसभा चुनाव में एनसीपीआई ने चार उम्मीदवार उतारे थे। सभी उम्मीदवारों को मिलाकर पार्टी को केवल 1,198 वोट मिले और कई सीटों पर उसे नोटा से भी कम मत प्राप्त हुए। चुनाव आयोग को दी गई जानकारी के अनुसार पार्टी को मात्र 1.13 लाख रुपये का चंदा मिला था। जिस पार्टी के पास न मजबूत संगठन था, न कार्यकर्ता, न संसाधन और न ही जनाधार, उसका अचानक राष्ट्रीय राजनीति में उभरना कई सवाल खड़े करता है।

पूरी तस्वीर तब बदली जब तृणमूल कांग्रेस के 20 बागी सांसदों के एनसीपीआई में विलय की चर्चा सामने आई। एक झटके में नोटा से हारने वाली पार्टी संसद की बड़ी पार्टियों की कतार में खड़ी दिखाई देने लगी। इसी बीच पार्टी अध्यक्ष उत्तिया कुंडू ने सोशल मीडिया पर पश्चिम बंगाल के नेता शुभेंदु अधिकारी के साथ तस्वीर साझा करते हुए उन्हें मुख्यमंत्री बनने की शुभकामनाएं दीं। इसके बाद हावड़ा स्थित पार्टी कार्यालय के बाहर सुरक्षा व्यवस्था बढ़ा दी गई, जिससे राजनीतिक अटकलों को और बल मिला। भारतीय संविधान की दसवीं अनुसूची के अनुसार यदि किसी दल के दो-तिहाई सांसद या विधायक किसी अन्य दल में विलय करते हैं तो उन पर दल-बदल कानून लागू नहीं होता। माना जा रहा है कि इसी प्रावधान का लाभ उठाकर बागी सांसदों ने नई राजनीतिक पहचान हासिल करने का रास्ता चुना है। एनसीपीआई जैसी छोटी पार्टी इस उद्देश्य के लिए उपयुक्त मानी जा रही है क्योंकि उसका कोई बड़ा संगठनात्मक ढांचा या आंतरिक गुटबाजी नहीं है।

इस पूरे घटनाक्रम ने भारतीय लोकतंत्र के कई प्रश्न सामने रख दिए हैं। जनता के बीच जाकर चुनाव लड़ने वाली पार्टी को जहां केवल 1,198 वोट मिले, वहीं बिना एक भी सीट जीते उसे 20 सांसद मिल गए। यह स्थिति बताती है कि कई बार विचारधारा से अधिक संख्या का महत्व हो जाता है। देश में 2,500 से अधिक पंजीकृत लेकिन गैर-मान्यता प्राप्त राजनीतिक दल हैं और भविष्य में उनके इसी प्रकार इस्तेमाल की आशंका से भी इनकार नहीं किया जा सकता।

अब 20 सांसदों के साथ एनसीपीआई की राजनीतिक हैसियत बदल चुकी है। उसे संसदीय सुविधाएं, अधिक राजनीतिक पहचान और भविष्य में राष्ट्रीय दल बनने का अवसर मिल सकता है। हालांकि सबसे बड़ा सवाल यही है कि क्या यह पार्टी भविष्य के चुनावों में जनता के बीच भी उतनी ही मजबूत दिखाई देगी या फिर केवल बागी नेताओं के लिए एक अस्थायी राजनीतिक ठिकाना बनकर रह जाएगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

विदेशी एआई की बैसाखी छोड़ो, अब भारत को चाहिए अपना प्लेटफॉर्म, अपना कोड, अपना कल

विदेशी प्लेटफॉर्म की बैसाखी अब तोड़नी होगी, क्योंकि लंबी दौड़ में बैसाखी के सहारे चलने वाला कभी विजेता नहीं बनता। भारत को अब गिरना नहीं, बल्कि अपने दम पर अपने प्लेटफॉर्म और अपने भविष्य की ओर दौड़ना है। अमेरिका की एक अग्रणी एआई कंपनी के शक्तिशाली मॉडल को राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर सरकारी आदेश से रातोंरात बंद कर दिया गया। इस घटना ने स्पष्ट कर दिया कि जिस तकनीक पर दुनिया अपनी अर्थव्यवस्था, शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा का भविष्य टिका रही है, उसकी चाबी उसके निर्माता के हाथ में ही रहती है।

भारत आज डिजिटल उपलब्धियों पर गर्व करता है, लेकिन जिन क्लाउड सेवाओं, मोबाइल ऑपरेटिंग सिस्टम और एआई प्लेटफॉर्म पर हमारी व्यवस्था निर्भर है, उनमें अधिकांश विदेशी कंपनियों के नियंत्रण में हैं। यह स्थिति डिजिटल आत्मनिर्भरता नहीं, बल्कि डिजिटल किराएदारी है। किराएदार को कब घर खाली करना पड़े, इसका निर्णय उसका मालिक करता है।

यूक्रेन युद्ध के दौरान वैश्विक तकनीकी प्रतिबंधों ने दिखा दिया कि आधुनिक संघर्षों में तकनीक कितनी निर्णायक भूमिका निभाती है। यदि भविष्य में भारत पर किसी प्रकार का तकनीकी प्रतिबंध लगाया गया तो सरकारी डेटा, स्टार्टअप इकोसिस्टम और मोबाइल आधारभूत संरचना पर इसका गंभीर प्रभाव पड़ सकता है। एआई अब केवल सुविधा नहीं, बल्कि बिजली की तरह बुनियादी आवश्यकता बन चुका है। खेती, चिकित्सा, शिक्षा और रक्षा-हर क्षेत्र में इसकी भूमिका बढ़ रही है। यदि इसका नियंत्रण विदेशों में होगा तो हमारी रणनीतिक स्वतंत्रता भी सीमित रहेगी। डेटा को नया तेल कहा जाता है, लेकिन भारत अपने विशाल डेटा संसाधनों का पूरा लाभ नहीं उठा पा रहा। विदेशी कंपनियां भारतीय डेटा से अपने मॉडल विकसित कर रही हैं और हम उन्हीं सेवाओं के लिए भुगतान कर रहे हैं। यह निर्भरता भविष्य में और गहरी हो सकती है। दूसरी चुनौती यह है कि विदेशी एआई मॉडल किस डेटा पर प्रशिक्षित हैं, उनमें किस प्रकार का पूर्वाग्रह है और वे संवेदनशील विषयों पर क्या दृष्टिकोण अपनाते हैं, इसकी पारदर्शिता सीमित है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा का प्रश्न स्वाभाविक है। सबसे बड़ा खतरा यह है कि सस्ती विदेशी सेवाओं की उपलब्धता स्वदेशी नवाचार को कमजोर कर सकती है। यदि हम केवल उपभोक्ता बने रहे तो वैश्विक तकनीकी नेतृत्व कभी हासिल नहीं कर पाएंगे। विकसित भारत का सपना तभी साकार होगा जब हम उपयोगकर्ता से आगे बढ़कर निर्माता बनें।

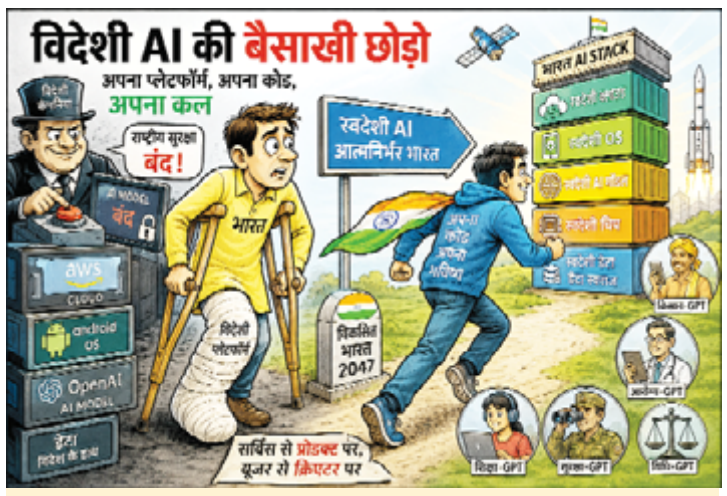

भारत के पास प्रतिभा, डेटा और विशाल बाजार-तीनों की ताकत मौजूद है। दुनिया की प्रमुख तकनीकी कंपनियों में भारतीय विशेषज्ञ महत्वपूर्ण पदों पर कार्य कर रहे हैं। देश के पास करोड़ों स्मार्टफोन उपयोगकर्ता, अनेक भाषाएं और विविध सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों से जुड़ा अनमोल डेटा है।

भारत के पास प्रतिभा, डेटा और विशाल बाजार-तीनों की ताकत मौजूद है। दुनिया की प्रमुख तकनीकी कंपनियों में भारतीय विशेषज्ञ महत्वपूर्ण पदों पर कार्य कर रहे हैं। देश के पास करोड़ों स्मार्टफोन उपयोगकर्ता, अनेक भाषाएं और विविध सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों से जुड़ा अनमोल डेटा है। यदि इन संसाधनों का सही उपयोग किया जाए तो भारत अपने लिए विशिष्ट एआई मॉडल विकसित कर सकता है।

सरकार द्वारा एआई मिशन, राष्ट्रीय कंप्यूटिंग क्षमता और भारतीय भाषाओं पर आधारित पहलें सही दिशा में कदम हैं, लेकिन इनकी गति और व्यापकता बढ़ाने की आवश्यकता है। भारत को कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा और सुरक्षा जैसे क्षेत्रों के लिए भारतीय संदर्भों पर आधारित स्वदेशी एआई मॉडल विकसित करने होंगे। गैर-व्यक्तिगत डेटा का सुरक्षित राष्ट्रीय ढांचा तैयार कर अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देना चाहिए, साथ ही डेटा संरक्षण कानूनों को प्रभावी बनाकर भारतीय नागरिकों के डेटा की सुरक्षा सुनिश्चित करनी होगी। एआई के युग में कंप्यूटिंग शक्ति भी रणनीतिक संसाधन बन चुकी है। देश को उच्च क्षमता वाले सुपरकंप्यूटर, स्वदेशी प्रोसेसर और बड़े जीपीयू नेटवर्क के निर्माण में युद्धस्तर पर निवेश करना होगा। विदेशों में कार्यरत भारतीय एआई विशेषज्ञों को आकर्षक अवसर देकर वापस लाना और अनुसंधान संस्थानों को अधिक स्वतंत्रता देना भी आवश्यक है।

आत्मनिर्भरता केवल उत्पादों के निर्माण तक सीमित नहीं हो सकती। चिप से लेकर चैटबॉट, क्लाउड से लेकर सोर्स कोड और सॉफ्टवेयर से लेकर सुरक्षा प्रणाली तक संपूर्ण तकनीकी श्रृंखला में स्वदेशी क्षमता विकसित करनी होगी। इतिहास गवाह है कि जिन देशों ने तकनीक का नेतृत्व किया, उन्होंने भविष्य की दिशा भी तय की। इसलिए भारत को अब सेवा प्रदाता से उत्पाद निर्माता बनने की यात्रा तेज करनी होगी। जिस दिन देश का किसान अपनी भाषा में भारतीय एआई से समाधान पाएगा, उसी दिन डिजिटल आत्मनिर्भरता का वास्तविक अर्थ साकार होगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

थोक महंगाई 43 महीने के शिखर पर

मई महीने में थोक महंगाई दर 9.68% पर पहुंच गई है, जो अप्रैल के 8.26% की तुलना में उल्लेखनीय वृद्धि है। सितंबर 2022 के बाद यह सबसे ऊंचा स्तर है और संकेत देता है कि आम आदमी की थाली से लेकर उद्योगों के कच्चे माल तक हर क्षेत्र पर महंगाई का दबाव बढ़ रहा है। प्राइमरी आर्टिकल्स की महंगाई 3.78% से बढ़कर 4.99% हो गई है, जबकि फूड इंडेक्स 3.11% से बढ़कर 4.49% पर पहुंच गया है। सबसे अधिक वृद्धि फ्यूल और पावर श्रेणी में दर्ज की गई, जहां महंगाई 24.89% से बढ़कर 30.33% हो गई। मैन्युफैक्चरिंग उत्पादों की कीमतों में भी उल्लेखनीय बढ़ोतरी दर्ज की गई है।

इसका सीधा असर अनाज, सब्जी, खाद्य तेल, डीजल, पेट्रोल, बिजली, सीमेंट और स्टील जैसी आवश्यक वस्तुओं की कीमतों पर दिखाई दे रहा है। थोक महंगाई का प्रभाव कुछ समय बाद खुदरा बाजार पर भी पड़ता है, इसलिए आने वाले दिनों में घरेलू बजट पर अतिरिक्त दबाव पड़ना तय माना जा रहा है।

महंगाई बढ़ने के पीछे कई घरेलू और वैश्विक कारण हैं। अमेरिका-ईरान तनाव के कारण होर्मुज जलडमरूमध्य में अनिश्चितता बनी हुई है, जिससे कच्चे तेल की कीमतों में तेजी आई है। भारत अपनी जरूरत का अधिकांश कच्चा तेल आयात करता है, इसलिए ईंधन महंगा होने का असर परिवहन लागत और फिर हर वस्तु की कीमत पर पड़ता है।

दूसरी ओर कमजोर मानसून और बेमौसम बारिश से दलहन, तिलहन और सब्जियों की पैदावार प्रभावित हुई है, जिससे आपूर्ति घटने के कारण कीमतें बढ़ी हैं। रूस-यूक्रेन युद्ध और लाल सागर क्षेत्र में तनाव के चलते वैश्विक सप्लाई चेन भी पूरी तरह सामान्य नहीं हो सकी है। शिपिंग लागत बढ़ने और कंटेनरों की देरी ने आयातित वस्तुओं को महंगा कर दिया है। कोविड के बाद आर्थिक गतिविधियों में तेजी, निर्माण परियोजनाओं और मांग में वृद्धि ने भी कीमतों पर दबाव बनाया है।

महंगाई को नियंत्रित करने के लिए सरकार और रिजर्व बैंक कई स्तरों पर प्रयास कर रहे हैं। रिजर्व बैंक ने रेपो रेट बढ़ाकर बाजार में नकदी नियंत्रित करने का प्रयास किया है। सरकार ने गेहूं और चावल के निर्यात पर नियंत्रण रखा है, प्याज पर निर्यात शुल्क लगाया है और बफर स्टॉक से दाल उपलब्ध कराई जा रही है। एनएएफईडी और एनसीसीएफ के माध्यम से आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धता बनाए रखने की कोशिश की जा रही है।

उज्ज्वला योजना के लाभार्थियों को गैस सब्सिडी और प्रधानमंत्री गरीब कल्याण अन्न योजना के तहत करोड़ों लोगों को मुफ्त राशन उपलब्ध कराया जा रहा है। वन नेशन वन राशन कार्ड, ई-नाम, किसान रेल और पीएम-किसान जैसी योजनाओं ने भी सप्लाई चेन को मजबूत करने और किसानों को राहत देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। पिछले वर्षों में दाल और तिलहन उत्पादन बढ़ाने के प्रयासों का भी सकारात्मक प्रभाव दिखाई दिया है। दीर्घकालिक समाधान के लिए खाद्य तेलों और ऊर्जा क्षेत्र में आयात पर निर्भरता कम करना आवश्यक होगा। इथेनॉल मिश्रण बढ़ाने, इलेक्ट्रिक वाहनों को प्रोत्साहन देने, सौर ऊर्जा के विस्तार, जलवायु अनुकूल खेती, आधुनिक सिंचाई तकनीक और बेहतर भंडारण क्षमता विकसित करने पर विशेष ध्यान देना होगा। उत्पादन बढ़ाने और बर्बादी रोकने के साथ मजबूत लॉजिस्टिक्स नेटवर्क तैयार करना भी समय की मांग है। वर्तमान स्थिति केवल भारत की चुनौती नहीं, बल्कि वैश्विक परिस्थितियों का परिणाम है। फिर भी मजबूत आर्थिक प्रबंधन, आत्मनिर्भरता और उत्पादन क्षमता में वृद्धि के माध्यम से इसका प्रभाव सीमित किया जा सकता है। महंगाई केवल आर्थिक सूचकांक नहीं, बल्कि हर परिवार की रसोई का गणित है। इस गणित का संतुलन बनाए रखना सरकार, राज्यों, उद्योग और समाज सभी की साझा जिम्मेदारी है, क्योंकि रसोई का बजट बिगड़ता है तो उसका असर पूरे परिवार और अंततः पूरी अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

राफेल की उड़ान से मेक इन इंडिया को पंख ...

राफेल डील अब केवल 4.5 पीढ़ी के लड़ाकू विमान की खरीद तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह भारत की रक्षा आत्मनिर्भरता, रक्षा कूटनीति और वैश्विक हथियार बाजार में बढ़ती हैसियत का प्रतीक बन गई है। यदि भारत 12 संभावित देशों को होने वाली राफेल डील में 60 प्रतिशत स्वदेशी हिस्सेदारी की शर्त मनवाने में सफल होता है तो दुनिया यह मानेगी कि भारत अब केवल बाजार नहीं, बल्कि वैश्विक रक्षा उद्योग का भागीदार बन चुका है। वायुसेना को आधुनिक विमान चाहिए, वित्त मंत्रालय को लागत कम रखनी है और युवाओं को रोजगार चाहिए। इन तीनों आवश्यकताओं का समाधान तभी संभव है जब राफेल भारत में बने, भारतीय हथियारों से लैस हो और भारत के माध्यम से दुनिया तक पहुंचे।

फ्रांस की कंपनी डसॉल्ट एविएशन मिस्र, यूएई, इंडोनेशिया, सर्बिया और कतर जैसे देशों को राफेल बेच रही है, जबकि ग्रीस, कोलंबिया, बांग्लादेश समेत 12 नए देश कतार में हैं। भारत का तर्क है कि जब वह 36 राफेल खरीद चुका है और नौसेना के लिए 26 राफेल-एम की लगभग 63 हजार करोड़ रुपये की डील अंतिम चरण में है, तो तीसरे देशों को जाने वाले राफेल में भारत में बने सिस्टम लगाने का अधिकार भी उसे मिलना चाहिए। इससे भारतीय कंपनियों को वैश्विक सप्लाई चेन में स्थान मिलेगा, स्पेयर पार्ट्स देश में बनने से लागत घटेगी और भारत रक्षा निर्यात का बड़ा केंद्र बन सकेगा।

हालांकि फ्रांस के लिए यह शर्त आसान नहीं है। डसॉल्ट राफेल को अपनी तकनीकी श्रेष्ठता का प्रतीक मानती है। रडार, एवियोनिक्स, मिशन कंप्यूटर और इंजन का बड़ा हिस्सा फ्रांस में तैयार होता है। भारत चाहता है कि अस्त्र मिसाइल, रुद्रम एंटी-रेडिएशन मिसाइल, उत्तम एईएसए रडार, स्वदेशी इलेक्ट्रॉनिक वॉरफेयर सूट और भविष्य में ब्रह्मोस-एनजी जैसे सिस्टम भी तीसरे देशों को निर्यात होने वाले राफेल में जोड़े जा सकें। फ्रांस को आशंका है कि अधिक स्वदेशी हिस्सेदारी से उसकी तकनीकी पहचान कमजोर होगी और संवेदनशील तकनीक के लीक होने का खतरा बढ़ेगा। भारतीय वायुसेना की 114 मल्टी-रोल फाइटर एयरक्राफ्ट की आवश्यकता इस पूरी बहस की असली परीक्षा है। सरकार चाहती है कि इनमें से अधिकांश विमान भारत में बनें और उनमें 60 प्रतिशत स्वदेशी सामग्री हो। इसके लिए भारत में असेंबली लाइन स्थापित करनी होगी तथा इंजन प्रौद्योगिकी हस्तांतरण पर सहमति बनानी होगी। बिना इंजन तकनीक के आत्मनिर्भरता अधूरी रहेगी और भविष्य की एएमसीए परियोजना भी प्रभावित होगी।

भारत अब केवल विमान नहीं, बल्कि प्लेटफॉर्म की स्वतंत्रता चाहता है। अभी विदेशी हथियार प्रणालियों में दूसरे देशों के हथियार जोड़ने में अनेक प्रतिबंध आते हैं। यूक्रेन युद्ध ने यह भी दिखाया कि यदि युद्ध के दौरान स्पेयर पार्ट्स रुक जाएं तो पूरी फ्लीट प्रभावित हो सकती है। इसलिए भारत मिशन कंप्यूटर के सोर्स कोड और ओपन आर्किटेक्चर की मांग कर रहा है ताकि भविष्य में अपनी आवश्यकता के अनुसार हथियार एकीकृत किए जा सकें।

इस राह में कीमत, समय और कूटनीतिक संतुलन जैसी चुनौतियां भी हैं। नई उत्पादन लाइन स्थापित करने और बड़े पैमाने पर स्वदेशीकरण में वर्षों लग सकते हैं, जबकि वायुसेना के स्क्वाड्रनों की संख्या पहले ही आवश्यकता से कम है। अमेरिका और रूस भी अपने विकल्पों के साथ मैदान में हैं, इसलिए भारत को रणनीतिक संतुलन बनाए रखना होगा।

राफेल डील अब केवल रक्षा खरीद नहीं, बल्कि औद्योगिक विकास, तकनीकी आत्मनिर्भरता और रोजगार सृजन का अवसर है। जिस दिन किसी मित्र देश की वायुसेना का राफेल भारत में बने हथियारों के साथ उड़ान भरेगा और उस पर 'मेड इन इंडिया' की छाप होगी, उसी दिन आत्मनिर्भर भारत की वास्तविक उड़ान मानी जाएगी। तब तक सरकार की जिम्मेदारी है कि वह स्पष्ट करे कि 60 प्रतिशत स्वदेशी की गारंटी केवल कागज पर है या भविष्य के करारों का हिस्सा बनने जा रही है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)